कौशल विकास – आज की एक त्वरित माँग

चित्ररेखा*
मनोज कुमार**

कौशल से तात्पर्य विद्यार्थियों के अंदर उस कुशलता, निपुणता एवं हुनर के विकास करने से है जो उन्हें वर्तमान एवं भावी जीवन को जीने के लिये तैयार करें। वर्तमान समय में हमारी शिक्षा पद्धति विद्यार्थियों के अंदर कौशल विकास करने में काफ़ी हद तक असमर्थ रही है। इस लेख का उद्देश्य कौशल विकास की आवश्यकता एवं महत्व पर चर्चा करना तथा व्यावसायिक शिक्षा कौशल विकास से जुड़े विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालना है जैसे कि क्या व्यावसायिक कौशल विकास के माध्यम से बेरोज़गारी की समस्या को हल एवं लुप्त होती हुई सांस्कृतिक विरासत एवं कलाओं को बचाया जा सकता है? क्या प्राथमिक स्तर से ही व्यावसायिक कौशल विकास शुरू किया जा सकता है? प्राथमिक स्तर पर किस प्रकार के व्यावसायिक कौशल विद्यार्थियों को सिखाये जा सकते हैं? क्या सामान्य शिक्षा के साथ-साथ व्यावसायिक कौशल विकास प्रशिक्षण दिया जा सकता है? विद्यालय में व्यावसायिक कौशल विकास के लिये क्या उपाय किये जा सकते हैं? व्यावसायिक कौशल विकास प्रदान करते समय एक विद्यालय के सम्मुख प्रमुख रूप से कौन-कौन सी समस्याएँ आती हैं? व्यावसायिक कौशल विकास को लेकर विद्यालय प्रबंधन समिति की क्या भूमिका हो सकती है? व्यावसायिक कौशल विकास के दृष्टिकोण से वर्तमान शिक्षा प्रणाली में किस प्रकार के सुधार की आवश्यकताएँ हैं? इस लेख में इन सभी प्रश्नों के उत्तर पर प्रकाश डालने का एक छोटा सा प्रयास किया गया है।

* प्रवक्ता, जिला संसाधन इकाई (डी.आर.डी.यू. विभाग), मंडलीय शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, धुम्मलनहेड़ा (दिल्ली -73)
** टी.जी.टी. सोशल साईंस (शिक्षा विभाग) रा. व. मा. बा. वि. मोती बाग – 1, नयी दिल्ली 21

विभिन्न कलाओं, दस्तकारी, कार्यानुभव, तकनीकी, नृत्य कला, चित्रकला एवं जीवन जीने की शैली अर्थात् इन सबका संबंध जीवन कौशल आदि से है। भाषायी कौशल, लेखन कौशल, संप्रेषण कौशल,व्यावहारिक कौशल, निर्णय कौशल, हस्तकला कौशल और तकनीकी कौशल भी इस कौशल विकास के प्रमुख भाग हैं।

क्या कौशल विकास और व्यावसायिक कौशल विकास दोनों एक हैं? क्या कौशल विकास, व्यावसायिक कौशल एवं जीवन कौशल को बढ़ाता है?

जहाँ तक कौशल विकास का संबंध है कौशल विकास व्यावहारिक एवं व्यावसायिक दोनों है। व्यावसायिक कौशल, कौशल विकास का केवल एक भाग है। कौशल विकास न केवल व्यावसायिक कौशल विकास को बढ़ाता है बल्कि जीवन कौशल को बढ़ाता है और जीवन कौशल एवं व्यावसायिक कौशल में निपुणता लाकर आर्थिक स्थिति को मज़बूत बनाने के साथ-साथ जीवन को सुगम एवं सरल बनाने में सहायता करता है। व्यावसायिक कौशल विकास का संबंध प्रत्यक्ष रूप से उत्पादकता एवं आर्थिक स्थिति से जुड़ा है अर्थात ऐसे कौशलों का विकास जिससे न केवल व्यक्ति विशेष की कार्य क्षमता, उत्पादकता एवं आर्थिक स्थिति मज़बूत होती है बल्कि पूरे देश की कार्य क्षमता, उत्पादकता एवं आर्थिक स्थिति मज़बूत होती है।

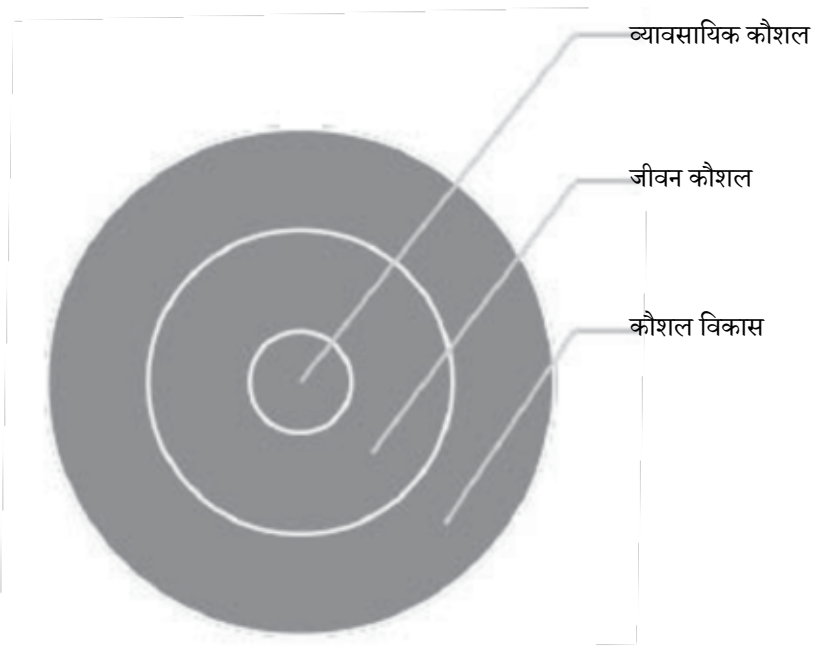

एक कौशल प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कई छोटे-बड़े कौशलों से जुड़ा होता है और उन कौशलों पर अपना प्रभाव डालता है। जैसे भाषायी कौशल विकास के द्वारा न केवल विद्यार्थी अपने विचारों को अभिव्यक्त कर पाता है। बल्कि दूसरों के साथ मधुर संबंध बनाने, संप्रेषण करने में भी सक्षम हो जाता है। यदि इस कौशल में और अधिक निखार और निपुणता ला दी जाए तो यह व्यवसाय एवं व्यापार करने में अधिक सहायक होता है। इसी कौशल का उपयोग जब एक व्यापारी द्वारा अपने व्यापार के अंतर्गत किया जाता है तब वह न केवल अपने ग्राहकों को अपनी तरफ़ आकर्षित कर पाता है बल्कि उन्हें अपने साथ जोड़े रखने में भी कामयाब रहता है। एक पुरानी कहावत है कि जो काम एक जेब कतरे की कैंची नहीं कर सकती वही काम एक व्यापारी की जुबान (भाषा शैली) कर देती है। वह अपनी भाषा शैली और विक्रय शैली से ग्राहक को इस कदर प्रभावित करता है कि ग्राहक जल्दी से किसी और व्यापारी की तरफ़ जाना नहीं चाहता।

अब हमारे सामने प्रश्न यह आता है कि क्या व्यावसायिक कौशल विकास के माध्यम से बेरोज़गारी की समस्या को हल किया जा सकता है? किसी भी व्यक्ति की जीवन शैली काफ़ी हद तक उसकी आर्थिक स्थिति पर निर्भर करती है। यदि व्यक्ति की आर्थिक स्थिति मज़बूत होती है तो वह गरीबी और उससे जुड़ी समस्याओं का सामना कर सकता है। परंतु उसके लिये उसके पास रोज़गार होना चाहिए और ऐसी शिक्षा होनी चाहिए जो उसे रोज़गार दिलाने में सहायक हो। शिक्षा के द्वारा व्यावसायिक कौशल विकास होना चाहिए ताकि विद्यार्थी आर्थिक रूप से निर्भर बन सके इस संबंध में डॉ. राधाकृष्णन ने कहा है कि विद्यार्थियों को जीविकोपार्जन में सहायता देना शिक्षा के अनेक कार्यों में से सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। महात्मा गांधी ने व्यावसायिक कौशल विकास पर बल देते हुए कहा कि सच्ची शिक्षा को बालक और बालिकाओं के लिये बेकारी के विरूद्ध एक प्रकार की सुरक्षा देनी चाहिए। उनके अनुसार शिक्षा का तात्कालिक उद्देश्य बालक के बड़े होने पर उसे जीविकोपार्जन के योग्य बनाना है। यदि हमारी शिक्षा यह कार्य नहीं कर पाती तो वह व्यर्थ है। यदि वह व्यक्ति की भोजन, वस्त्र और मकान की मूल आवश्यकताओं को पूर्ण नहीं करती तो वह निरर्थक है। गांधी जी ने आत्म निर्भर बनाने वाली शिक्षा पर बल दिया।

बेरोज़गारी एक ऐसी समस्या है जिसका सामना विकसित एवं विकासशील दोनों देशों को करना पड़ रहा है। परंतु यदि देखा जाए तो दोनों देशों के बुनियादी ढाँचे में काफ़ी अंतर है। विकासशील देशों में जनसंख्या कम होने के बावजूद भी अधिकतर सारा काम मशीनों से किया जाता है जिसके कारण पूरी तरह से मानव संसाधनों का उपयोग नहीं हो पाता और बेरोज़गारी की समस्या उत्पन्न होती है वहीं दूसरी तरफ़ भारत एक ऐसा विशाल देश है जहाँ मानव संसाधन प्रचुर मात्रा में हैं। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या लगभग एक अरब इक्कीस करोड़ है। यहाँ की सबसे बड़ी विशेषता है कि यहाँ अधिकतर काम मशीनों से नहीं किए जाने के बावजूद भी बड़ी मात्रा में बेरोज़गारी है। यहाँ काम

करने वाले हाथों के साथ-साथ सोचने वाले दिमाग बहुत हैं परंतु उन सभी हाथों के लिये न तो काम है और न ही उनकी सोच का सही दिशा में प्रयोग करने के उचित साधन (व्यवसाय) एवं उपाय हैं। यही कारण है कि निर्धनता और बेरोज़गारी देश के सम्मुख दो प्रमुख गंभीर समस्याएँ हैं। इन समस्याओं से निपटना न केवल अपने आप में बड़ी चुनौती हैं बल्कि इन समस्याओं के कारण उत्पन्न अन्य समस्याओं जैसे भ्रष्टाचार, ड्रग्स सेवन, बलात्कार, चोरी, अवज्ञा, तनाव, उत्पीड़न, आत्म हत्या, सामाजिक नियमों का उल्लंघन, हिंसा, विभिन्न प्रकार की शारीरिक बीमारियों एवं मानसिक तनाव आदि से निपटना भी मुश्किल है।

ये समस्याएँ न केवल लोगों के व्यक्तिगत विकास में बाधक हैं अपितु देश के आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास में भी बाधक हैं। यहाँ पर मुख्य रूप से ध्यान देने वाली बात यह है कि निर्धनता और बेरोज़गारी के बढ़ने का एकमात्र मुख्य कारण केवल हमारी बढ़ती जनसंख्या ही नहीं है क्योंकि यदि हम अर्थशास्त्र के दृष्टिकोण से देखें तो बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण माँग उत्पन्न होती है और उस माँग को संतुष्ट करने के लिये पूर्ति अर्थात् उत्पादन की आवश्यकता होती है जो कि नये-नये रोज़गारों को जन्म देती है। इसलिये केवल बढ़ती जनसंख्या को दोष देना काफ़ी हद तक सही नहीं है बल्कि हमारी वर्तमान शिक्षा व्यवस्था भी काफ़ी हद तक इसके लिये ज़िम्मेदार है। हमारी शिक्षा व्यवस्था जनसंख्या शिक्षा का प्रचार प्रसार करने में तो असमर्थ रही है साथ-साथ लोगों को रोज़गार देने में भी असमर्थ रही है। हमारी शिक्षा व्यवस्था में ऐसी शिक्षा का अभाव है जिससे लोगों को तुरंत रोज़गार मिले। इसके अलवा रोज़गार के पर्याप्त अवसरों की व्यवस्था किए बिना ही शैक्षिक सुविधाओं का अनियोजित फैलाव है। पढ़ी गई किताबी सैद्धांतिक शिक्षा और प्रयोग की जाने वाली शिक्षा में अंतर है जो की बढ़ती हुई बेरोज़गारी के लिये उत्तरदायी है। रोज़गार की दौड़ में शिक्षित नौजवान वर्ग मारा-मारा फ़िर रहा है। स्नातक, परास्नातक व डॉक्टरेट की उपाधि लेने के बाद भी व्यक्ति बेरोज़गारी के शिकार हैं। शिक्षा प्राप्त व्यक्ति को तो अपने लिये और समाज के लिये उपयोगी सिद्ध होना चाहिए, किन्तु उसके बदले वह अभी तक अपने माता- पिता और समाज पर ही भार बना हुआ है।

कौशल विकास के द्वारा न केवल हम बेरोज़गारी का हल प्राप्त कर सकते है बल्कि अपनी संस्कृति को भी सुरक्षित रख सकते हैं या यूँ कहें कि बेरोज़गारी और संस्कृति के बचाव के लिये आज कौशल विकास करना अत्यंत जरूरी हो गया है। यदि हम अपने इतिहास का अध्ययन करें तो पाते हैं कि भारत के कारीगर इतने निपुण थे कि उनकी कारीगरी का लोहा विदेशी भी मानते थे। भारत की चित्रकला, नक्काशी, मूर्तिकला, यहाँ के बुनकर, कुम्हार अपनी-अपनी कलाओं के लिए विश्व विख्यात थे। भारत की अजन्ता-एलोरा की गुफ़ाएँ, ताजमहल, रेशम और बनारस की साड़ियाँ आज भी विश्व प्रसिद्ध हैं। परंतु आज हम पाते हैं कि हमारी सांस्कृतिक हस्तकला कहीं लुप्त होती जा रही है। आज हमारा कारीगर भूखा मर रहा है। उसके प्रयासों को आज न तो उचित

प्रोत्साहन मिल रहा है और न ही उचित पारितोषिक व पारिश्रमिक। यही कारण है कि कुम्हार अब मिट्टी के बर्तन नहीं बनाना चाहता, बुनकर अब अपने हाथों से साड़ियाँ नहीं बनाना चाहता और अब वह पांरपरिक व्यवसायों से परहेज़ करने लगा है। परिणामस्वरूप न केवल हम अपनी सांस्कृतिक कलाओं से दूर होते जा रहे हैं बल्कि बेरोज़गारी और निर्धनता की ओर बड़ी तीव्रता से अग्रसित होते जा रहे हैं। इसलिये यह आवश्यक है कि अब हमें न केवल विभिन्न लुप्त होते हुए कौशलों को पुन: जीवित करना है बल्कि इन कौशलों को अपनी भावी पीढ़ी को भी हस्तांतरित करना है और इसके लिये ज़रूरी है कि कौशल विकास को शिक्षा के साथ जोड़ा जाए और इन्हें एक व्यवसाय का रूप दिया जाए तथा सरकार द्वारा ऐसे व्यावसायिक प्रोजेक्ट तैयार किये जाएँ जहाँ विभिन्न प्रकार के कौशलों का प्रयोग करना सभंव हो।

आज हमारी बहुत सी लोककलाएँ, लोकगीत, परंपरागत खेलों का भविष्य दाँव पर लगा हुआ है। उनकी अपनी पहचान एवं अस्तित्व को एक बहुत बड़ा खतरा है इसका एक मुख्य कारण यह भी है कि उनका स्थान धीरे-धीरे पश्चिमी संस्कृति व सभ्यता लेती जा रही है। हम देखते हैं कि आज माता-पिता अपने बच्चों को शास्त्रीय संगीत, शास्त्रीय नृत्य एवं परंपरागत कलाएँ सिखाना नहीं चाहते क्योंकि इनसे उनके बच्चों को न तो जल्दी पहचान मिलती है और न ही आर्थिक सहायता (रोज़गार) मिलती है। इसका सबसे बड़ा उदाहरण हम खेलों में भी देख सकते हैं। हॉकी भारत देश का एक राष्ट्रीय खेल है परंतु यदि आप इस राष्ट्रीय खेल के खिलाड़ियों के नाम बच्चों या बड़ों से पूछेगें तो शायद ही कोई उन खिलाड़ियों के नाम बता पाएगा और इस खेल को खेलना सीखना व व्यावसायिक खेल के रूप अपनाना चाहेगा। यहाँ तक की सबसे बड़ी विडंबना यह है कि हमारे देश की सरकार के द्वारा भी इस दिशा में कोई ठोस कदम नहीं उठाए जा रहे। इन्हें सिखाने के लिये पर्याप्त प्रशिक्षण केंद्र नहीं हैं। परंतु इसके विपरीत यदि क्रिकेट को लें तो स्थिति इसके बिलकुल विपरीत है। हर बालक क्रिकेटर बनना चाहता है। वर्तमान समय में व्यापक स्तर पर इन लुप्त होते हुए कौशलों पर एक शोध कार्य करने की आवश्यकता है ताकि समय रहते इन कौशलों को पुन: जीवित किया जा सके। इस प्रकार कौशल विकास के माध्यम से हम अपनी लुप्त होती हुई सांस्कृतिक विरासत एवं कलाओं को बचा सकते हैं।

व्यावसायिक कौशल विकास के महत्व को देखते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि सभी विद्यार्थियों को कौशल एवं व्यावसायिक कौशल शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए। परंतु किस स्तर पर प्रदान की जाए? क्या प्राथमिक स्तर से ही व्यावसायिक कौशल विकास शुरू कर देना चाहिए? यदि प्राथमिक स्तर से शुरू करें तो इसका स्वरूप क्या हो? ये कुछ मूलभूत प्रश्न हैं।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि व्यावसायिक कौशल विकास शिक्षा प्राथमिक स्तर से ही शुरू कर देनी चाहिए क्योंकि प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थी अधिक जिज्ञासु एवं सक्रिय होते हैं। वे नयी-नयी जानकारी ग्रहण करने व उनका प्रयोग करने में अधिक रुचि लेते हैं इसलिये कौशल विकास की नींव इसी अवस्था में

रख देनी चाहिए ताकि माध्यमिक और उच्च स्तर पर इन कौशलों का निरन्तर और गहराई से अध्ययन एवं अभ्यास करवाया जा सके तथा सिखाये गये कौशलों मे अधिक निखार लाया जा सके जिससे कि समय आने पर विद्यार्थी विभिन्न सीखे गये कौशलों का उपयोग अपनी जीविकोपार्जन में कर सकें। महात्मा गांधी ने प्राथमिक शिक्षा का स्वरूप क्या हो? पर जबाव देते हुए कहा कि मेरा जबाव यह है कि किसी उद्योग या दस्तकारी को बीच में रखकर उसके ज़रिए ही सारी शिक्षा दी जानी चाहिए। उन्होंने हाथ और मस्तिष्क के एक साथ प्रयोग पर बल दिया। उनके अनुसार 7 वर्ष का कोर्स समाप्त करने के बाद 14 वर्ष की आयु में बालक को कमाने वाले व्यक्ति के रूप में विद्यालय से बाहर भेजा जाना चाहिए।

प्राथमिक स्तर पर जहाँ तक कौशल विकास का संबंध है विद्यार्थियों को विभिन्न कौशलों की सामान्य जानकारी दी जा सकती है उन्हें प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से विभिन्न कौशलों से अवगत कराया जा सकता है। इस स्तर पर विभिन्न कौशलों के प्रति उनमें रुचि उत्पन्न की जा सकती है। प्राथमिक स्तर पर क्योंकि विद्यार्थी शारीरिक एवं मानसिक रूप से इतने परिपक्व नहीं होते इसलिए उन्हें उनकी रुचि

एवं आयु के अनुसार ही कौशलों को सिखाना चाहिए। इस स्तर पर विभिन्न कलाओं जैसे– दस्तकारी, कार्यानुभव, तकनीकी, नृत्य कला, गायन, लेखनकला, चित्रकला, मूर्तिकला एवं जीवन जीने की शैली अर्थात् जीवन कौशल, भाषायी कौशल, संप्रेषण कौशल, व्यावहारिक कौशल, निर्णय कौशल, हस्तकला कौशल आदि सामान्य शिक्षा विद्यार्थियों को दी जा सकती है। जबकि माध्यमिक स्तर पर इनका गहराई एवं विस्तार से अध्ययन कराने के साथ-साथ प्रयोगात्मक कार्य भी करवाया जा सकता है।

क्या सभी कौशलों का विकास सामान्य अध्यापकों के द्वारा कक्षा की सामान्य परिस्थितियों में कक्षा के अंतर्गत किया जा सकता है? यह एक सार्वभौमिक सत्य है कि सभी अध्यापक सर्वगुण एवं सर्वकौशल संपन्न नहीं होते। व्यक्तिगत भिन्नता का नियम उन पर भी लागू होता है। इसलिये यह मान लेना कि सामान्य अध्यापकों के द्वारा व्यावसायिक कौशल विद्यार्थियों को प्रदान किये जा सकते हैं सही नहीं होगा। एक सामान्य कक्षा अध्यापक विद्यार्थियों को विभिन्न कौशलों से अवगत तो करा सकता है परंतु उनका निरन्तर अभ्यास नहीं करा सकता क्योंकि उसके पास स्वयं इसके लिये न तो कोई विशेष प्रशिक्षण होता है, न ही पर्याप्त संसाधन और समय ही होता है।

कई बार वह विभिन्न कौशलों के नामों उनके महत्व एवं उपयोगों से स्वयं भली भाँति परिचित होता है परंतु उनकी अभिव्यक्ति में स्वयं को असमर्थ पाता है। जैसे यदि एक अध्यापक पाठ्य पुस्तक में दिये गए 'हमारे बाज़ार' नामक पाठ को विद्यार्थियों को पढ़ाता है तो वह इस पाठ के माध्यम से विद्यार्थियों को विभिन्न कौशलों जैसे विज्ञापन का निर्माण करना, विज्ञापन का प्रस्तुतीकरण करना एवं विक्रय शैली को विद्यार्थियों को प्रदर्शन एवं नाटकीय रूपांतरण के माध्यम से सिखा सकता है। परंतु उसके निरंतर अभ्यास के लिये एक वास्तविक वातावरण का निर्माण करना उसके लिये अति मुश्किल होता है। इसी संदर्भ में महात्मा गांधी जी ने कहा है कि एक साधारण बढ़ई बढ़ईगीरी का ज्ञान यत्रवत् देता है किंतु वैज्ञानिक ढ़ंग से बढ़ईगीरी की शिक्षा प्राप्त शिक्षक बालक को बढ़ईगीरी के ज्ञान के साथ-साथ गणित, लकड़ियों के भेद, लकड़ियों के उत्पादन क्षेत्र, औज़ारों की चित्रकारी तथा ज्यामितीय आकृतियों आदि का ज्ञान भी प्राप्त करा सकते हैं। इसलिए यदि विद्यार्थियों के अंदर व्यावसायिक कौशलों में निपुणता लानी है और उन्हें भविष्य के लिये तैयार करना है तो इसके लिए प्रशिक्षित अध्यापकों के साथ-साथ पर्याप्त संसाधनों की आवश्यकता होगी और उसके साथ-साथ उसी प्रकार का परिवेश तैयार करना होगा।

उपर्युक्त सभी तथ्यों के अलावा भी व्यावसायिक कौशल विकास प्रदान करते समय एक विद्यालय को अनेक सैद्धांतिक, प्रबंधकीय और संसाधन संबंधी बाधाओं से गुज़रना पड़ता है। जैसे–

- संरचनात्मक साधनों की कमी-कौशल विकास एक सैद्धांतिक विषय नहीं है इसे केवल किताबों के माध्यम से नहीं सीखा जा सकता इसे सीखने व सिखाने के लिये वास्तविक प्रयोग किये जाने

अति आवश्यक हैं। परंतु बड़ी दुख की बात है कि हमारे विद्यालयों में प्रयोग कराने के लिये पर्याप्त संसाधन नहीं हैं। पुराने पड़ गए घिसे-पिटे उपकरणों को ही उपयोग में लाया जा रहा है।

- अप्रशिक्षित शिक्षक-शिक्षकों के पास न तो पर्याप्त प्रशिक्षण है और न ही उनके प्रशिक्षण की उचित व्यवस्था है। सेमिनार या प्रशिक्षण के नाम पर सिर्फ़ औपचारिकताएँ पूरी की जाती हैं।
- कौशल प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी है जैसे– विद्यालय में कला अध्यापकों की नियुक्ति का न होना।
- पुराने और रूढ़ पाठ्यक्रम-विद्यालयों में व्यावसायिक शिक्षा का पाठ्य-विवरण अपर्याप्त है। अधिकांश पाठ्यक्रम अप्रासंगिक हो गए हैं। आधुनिक व्यावसायिक कौशलों का विकास किया जाना चाहिए जो वर्तमान समय की माँग के अनुरूप हों।
- काम के संसार से कार्यक्रम का जुड़ाव नहीं है– विद्यार्थियों को जिस तरह का प्रशिक्षण दिया जाता है और जो कौशल सिखाए जाते हैं वे उनके व्यावहारिक जीवन में किसी काम के साबित नहीं होते।
- विद्यार्थियों के लिये विद्यालय में कैरियर मनोविज्ञान और परामर्श का पर्याप्त प्रावधान नहीं है।

व्यावसायिक कौशल विकास के दृष्टिकोण से वर्तमान शिक्षा प्रणाली में अभी अत्यधिक सुधार की आवश्यकता है और उसमें सुधार करने के लिये निम्न उपाय अपनाये जा सकते हैं–

- एक मिशन के रूप में व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण का एक व्यापक कार्यक्रम बनाया जाना चाहिए तथा इसके लिये एक नए ढाँचे का निर्माण किया जाना चाहिए।
- स्कूल के परिसर में व्यावसायिक शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए जिससे कि विद्यार्थियों को दूर ना जाना पड़े विशेषकर लड़कियों को। अवकाशकालीन समय में व्यावसायिक शिक्षा की उचित व्यवस्था स्कूल के परिसर में की जानी चाहिए और अनौपचारिक रूप से कौशल विकास की नींव प्राथमिक अवस्था से ही रख देनी चाहिए।
- व्यावसायिक शिक्षा कौशल का विकास न केवल सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक कारणों से और ऐतिहासिक रूप से वंचितों, बल्कि प्रतिकूल शारीरिक तथा मानसिक स्थिति वाले बच्चों के लिये भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए।
- व्यावसायिक शिक्षा कौशल पाठ्यक्रमों की प्रवेश योग्यता में छूट देकर कक्षा 5 तक के विद्यार्थियों को प्रवेश दिया जाना चाहिए।
- व्यावसायिक शिक्षा केंद्रों को हुनर सिखाने के लिये और शौकिया तौर पर काम करने वाले केंद्रों के रूप में सभी बच्चों के लिये चलाया जा सकता है। यह प्राथमिक स्तर से शुरु हो और स्कूल के समय से पहले और बाद में उपलब्ध रहे।
- स्कूलों को व्यावसायिक शिक्षा केंद्रों के साथ जोड़ा जाए तथा इस क्षेत्र में पहले से मौजूद

व्यावसायिक शिक्षा केंद्रों के संसाधनों का सहयोग लिया जा सके।

- विद्यालय प्रबंधन समिति सभी को इस क्षेत्र में प्रभावी ढ़ग से कार्य करने की आवश्यकता है। विद्यालय प्रबंधन समिति के सदस्यों (माता-पिता, पार्षद, अध्यापकों) आदि को चाहिए कि वे समुदाय के लोगों से संपर्क बनाकर यह जानने का प्रयास करें कि उनके समुदाय विशेष के अंतर्गत कौन-कौन से व्यावसायिक कौशल पाये जाते थे और उन पाये जाने वाले कौशलों में से कौन से कौशल अब लुप्त होते जा रहे हैं, उनके लुप्त होने के वास्तविक एवं संभावित कारण कौन-कौन से हैं? इस पर शोध करना, कारणों का निदान कर उनका उपचार करना आदि जैसे कार्यों में विद्यालय प्रबंधन समिति के सभी सदस्यों को पहल करने की आवश्यकता है।
- सरकार को चाहिए कि वह इस काम के लिए गैर सरकारी संगठनों की मदद ले और उन्हें इस क्षेत्र में काम करने के लिए प्रेरित करे।
- विद्यालयों में सामान्य अध्यापकों के साथ-साथ अधिक से अधिक कौशल प्रशिक्षित अध्यापकों की नियुक्ति भी की जानी चाहिए।
- विद्यार्थियों के लिए विद्यालय परिसर में कैरियर मनोविज्ञान और परामर्श का पर्याप्त प्रावधान किये जाने चाहिए।
- विभिन्न प्रकार के पारंपरिक कौशलों के साथ - साथ आधुनिक कौशलों जैसे तकनीकी शिक्षा, कंप्यूटर शिक्षा भी विद्यार्थियों को दी जानी चाहिये जिससे कि विद्यार्थियों का वर्तमान और भविष्य दोनों सुरक्षित हो सकें।
- एक व्यवसाय केंद्रित नये पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाना चाहिए, जिसमें विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक कौशलों का समावेश हो और जो विद्यार्थियों को अपनी रुचि एवं योग्यता के अनुसार कौशलों को सीखने में मदद करे।

भारत में व्यावसायिक (कौशल) शिक्षा के लिए किये गए प्रयास

व्यावसायिक शिक्षा के महत्व एवं आवश्यकता को अनुभव करते हुए भारत में व्यावसायिक शिक्षा के लिये समय-समय पर कई प्रयास किये गए। भारत में व्यावसायिक शिक्षा के बारे में सबसे पहले उल्लेख वुड् डिस्पेच (1854) में किया गया इसके पश्चात हंटर कमीशन, हार्टाग कमेटी और सार्जेंट प्लान में भी व्यावसायिक शिक्षा पर ज़ोर देने की बात कही गयी। भारत की स्वतंत्रता के बाद गठित मुदालियर आयोग और फ़िर शिक्षा आयोग (1964-66) ने शिक्षा को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक परिवर्तन का एक सशक्त साधन मानते हुए, शिक्षा को उत्पादकता से जोड़ना राष्ट्रीय लक्ष्य की प्राप्ति के अनेक उपायों में से एक माना तथा कार्यानुभव को सामान्य शिक्षा के एक अभिन्न घटक के रूप में स्थापित करने की सिफ़ारिश की, उनके अनुसार कार्यानुभव का लक्ष्य भावी नागरिकों में स्वंय की महत्ता, सम्मान और कार्य कुशलता की भावना जाग्रत करना है।

कोठारी कमीशन की सिफ़ारिशों को मानते हुए राष्ट्रीय अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने भी

अपने दस वर्षीय स्कूल के पाठ्यक्रम - एक रूपरेखा (1976) नामक दस्तावेज़ में कार्यानुभव को स्कूली पाठ्यक्रम के रूप में सम्मिलित किया। दस वर्षीय स्कूली पाठ्यक्रम की समीक्षा समिति (1977) ने समाजोपयोगी उत्पादक कार्य नामक एक पृथक पाठ्यक्रमीय क्षेत्र की सिफ़ारिश की जो छात्रों को स्कूल में और स्कूल के बाहर विभिन्न सामाजिक और आर्थिक गतिविधियों में भाग लेने के अवसर प्रदान करता है और इन गतिविधियों के माध्यम से विभिन्न कार्यों में प्रयुक्त वैज्ञानिक सिद्धांतों और प्रक्रियाओं को समझने में सहायता करने में सहायता प्रदान करता है।

आदिशैशया रिपोर्ट 1978 में भी व्यावसायिक शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया गया और कहा गया कि 'जिस देश में औद्योगिक उत्पादन और कृषि उत्पादन निरंतर बढ़ता जा रहा हो, जहाँ विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ने नए-नए कार्य क्षेत्रों के द्वार खोल दिए हों, जहाँ वाणिज्य और व्यापार तथा कई प्रकार की सार्वजनिक सेवाओं का बड़ी तेज़ी से विस्तार हो रहा हो, वहाँ इन सारे नए-नए क्षेत्रों में न केवल उच्च स्तर के प्रशासनिक और व्यावसायिक कार्य को पूरा करने के लिये पर्याप्त मात्रा में कार्मिकों की पूर्ति होती रहनी चाहिए, वरन् ऐसे मध्य- स्तर के श्रमबल की भी आवश्यकता है जो अपने-अपने कार्यक्षेत्र में हों। इनके अभाव में न तो उत्पादन बढ़ सकेगा और न ही सेवाओं में सुधार होगा। उदाहरण के लिये यदि स्वास्थ्य-सेवाओं का लाभ सभी लोगों तक पहुँचाना हमारा लक्ष्य हो तो केवल डॉक्टरों से ही काम नहीं चलेगा इसके लिये हमें दवाएँ चाहिए, उपकरण चाहिए और अस्पतालों में कई तरह की सुविधाएँ चाहिए। इन सबको जुटाने से पहले हमें इनके निमार्ण की व्यवस्था करनी होगी।'

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) ने समाजोपयोगी उत्पादक कार्य की अवधारणा की संपुष्टि की तथा इसे पुन: कार्यानुभव का नाम दिया। वर्तमान में व्यावसायिक शिक्षा केवल बारहवीं स्तर पर दी जाती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में यह लक्ष्य रखा गया कि बारहवीं के 25 प्रतिशत बच्चे व्यावसायिक शिक्षा के अंतर्गत आ जाएँ जबकि वर्तमान में इस विकल्प के अंतर्गत 5 प्रतिशत से भी कम बच्चे हैं।

'माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायिक शिक्षाकरण' की केंद्र समर्थित योजना के पुनरीक्षण कार्यदल की रिपोर्ट, एन.सी.ई.आर.टी. 1998 के अनुसार व्यावसायिक शिक्षा को एक अति-विशाल और प्रभावी गतिशील कार्यक्रम बनाए जाने का काम लंबे समय से बाकी है। काम पर आधारित शिक्षा को स्कूली पाठ्यचर्या के पूर्व -प्राथमिक से बारहवीं कक्षा तक की पाठ्यचर्या का समाकलित अंग बना दिया जाना चाहिए। राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूप रेखा (2005)में भी शिक्षा को उत्पादकता से जोड़ने की सिफ़ारिश की गई है और कला शिक्षा एवं कार्यानुभव शिक्षा पर अधिक बल देने पर ज़ोर देने की बात की गई है।

निष्कर्ष

महान दार्शनिक जॉन डीवी ने व्यावसायिक कौशल विकास को महत्वपूर्ण मानते हुए कहा है कि हम लोगों को सभी प्रकार के काष्ठ, लोहे, बुनाई-सिलाई तथा रसोई के कामों का व्यवहार जीवन

यापन की विधियों जैसा करना चाहिए और शिक्षण को अध्ययन मात्र ही नहीं प्राप्त करना चाहिए। हम लोगों को इन कामों की कल्पना उनकी सामाजिक सार्थकता की दृष्टि से करनी चाहिए यानी प्रकियाओं के रूप में जिनसे समाज चलते हैं, उन साधनों के रूप में जिनके द्वारा बालक सामुदायिक जीवन की आवश्यकताओं को समझ सके और वे तरीके जिनके द्वारा मानव की बढ़ती हुई अन्तर्दृष्टि एवं प्रज्ञा के कारण इन आवश्यकताओं की पूर्ति होती आई है।

हमारे देश की शिक्षा व्यवस्था विद्यार्थियों के अंदर ज्ञानात्मक एवं सैद्धांतिक विकास पर बल देती है तथा अन्य व्यावहारिक पक्षों की अनदेखी करती है। अपने देश की शिक्षा व्यवस्था पर टिप्पणी करते हुए स्वामी विवेकानंद ने भी कहा था कि केवल पुस्तकीय ज्ञान से काम नहीं चलेगा। हमें उस दिशा की आवश्यकता है जिससे व्यक्ति अपने पैरों पर स्वयं खड़ा हो जाए। उन्होंने तकनीकी शिक्षा एवं व्यावहारिक शिक्षा पर बल दिया तथा सैद्धांतिक शिक्षा का खंडन किया और भारतीयों को सचेत करते हुए कहा कि तुम को कार्य के प्रत्येक क्षेत्र को व्यावहारिक बनाना पड़ेगा। संपूर्ण देश का सिद्धांतों के ढेरों ने विनाश कर दिया है।

वर्तमान समय में मनुष्य के समक्ष जीविका की समस्या एक प्रमुख गंभीर समस्या है। इस समय में शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिससे व्यक्ति पढ़ लिखकर अपनी बेसिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके और आर्थिक रूप से सक्षम बने। शिक्षा का कार्य मानव की व्यावसायिक एवं व्यावहारिक कुशलता प्राप्त करने में सहायता देना होना चाहिए। शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थियों को विभिन्न व्यवसायों का ज्ञान दिया जाना चाहिए जिसके आधार पर वह अपनी योग्यता के अनुसार किसी व्यवसाय को चुनकर अपनी जीविका कमाने लगे व उसमें सक्षम हों और अपनी आर्थिक आवश्यकताओं के लिये दूसरों पर निर्भर न हों। शिक्षा को उत्पादकता के साथ जोड़ा जाना चाहिए और उत्पादकता को बढ़ाने के लिये व्यावसायिक कौशल विकास अत्यतं आवश्यक है क्योंकि विभिन्न प्रकार के कौशल विकास के माध्यम से बेरोज़गारी की समस्या को न केवल नियंत्रित किया जा सकता है बल्कि कई प्रकार के रोज़गारों का सृजन कर आत्मनिर्भरता प्राप्त की जा सकती है।

बुनियादी शिक्षा, शिल्प शिक्षा, कार्य शिक्षा, समाजोपयोगी उत्पादक कार्य, शिक्षा का व्यावसायीकरण, कार्य अनुभव, जैसी अवधारणाएँ एक ही बात की ओर इशारा करती हैं और वह है शिक्षा को उत्पादकता से जोड़ा जाए। आज भारत में जो शिक्षा-व्यवस्था प्रचलित है वह मैकाले की देन है। उसने भारतीयों को ऐसी शिक्षा दी जिससे ब्रिटिश साम्राज्य का प्रशासनिक कार्य चलाने वाले बाबुओं की फ़ौज़ तैयार हो जाए। किन्तु आज समय की यह माँग है कि हमारी शिक्षा की रेलगाड़ी इकहरी रेल पटरी पर न चलकर, दुहरी रेल पटरी पर चले। आज शिक्षा के लिए शिक्षा का जो वातावरण बना हुआ है उसे रोज़गारोन्मुखी और उत्पादक शिक्षा में बदल दिया जाना चाहिए। वर्तमान समय में शिक्षा का पुनर्गठन किया जाना अत्यंत आवश्यक है यदि शिक्षा रोज़गारोन्मुखी हो जाएगी, कार्य अनुभव अधिक महत्वपूर्ण हो जाएगा जिससे कौशलों और

अभिवृत्तियों का विकास होगा तो शिक्षा पूरी करने के बाद जीवन यापन के क्षेत्र में प्रवेश करने वाला छात्र नौकरी के लिये मारा-मारा नहीं भटकेगा। वह स्व रोज़गार अपनाने के लायक हो जाएगा। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने कहा है भले ही व्यक्ति चाहे पुस्तकें पढ़ लिखकर पंडित बन जाए, किन्तु उसकी शिक्षा तब तक अधूरी मानी जाएगी जब तक वह अपने हाथ से किसी अच्छे प्रयोजन के लिये उसका उपयोग न करे।

इसलिये अब समय आ गया है कि हमारी सरकार द्वारा अब ज़मीनी स्तर पर प्रयास किए जाएँ तथा वर्तमान शैक्षिक व्यवस्था में एक ऐसा बड़ा परिवर्तन लाया जाए जो कार्यान्वित किया जा सके अर्थात् जिसे मूर्त रूप देना संभव हो।

संदर्भ

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय. 2009. *शिक्षा और समाज (एस 334) भारतीय शिक्षा पद्धति– कुछ मुद्दे* (पेज नं 59), नयी दिल्ली।

भारत सरकार एम.एच. आर.डी., *राष्ट्रीय शिक्षा नीति.* 1986. (भाग-5) एवं प्रोग्राम ऑफ़ एक्शन (1992) नयी दिल्ली।

गुप्त मंजीत सेन और अशोक धोटे – स्कूली शिक्षा में कार्यानुभव, मार्गनिर्देश. 1987. (पेज नं 1) राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, *दस वर्षीय स्कूली पाठ्यचर्या की रूपरेखा*. 1975. नयी दिल्ली।

_____. *'माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायिकरण'*. 1998 नयी दिल्ली।

_____. *राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूपरेखा 2000*, (पेज नं 12,15), नयी दिल्ली।

_____. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*, (पेज नं 116.118) नयी दिल्ली।

सक्सेना एन.आर. स्वरूप. 2006. – *'फ़िलोसिफ़िकल एंड सोशियो लोजिकल फाउंडेशन ऑफ़ एजुकेशन'*, विनय राखेजा मेरठ।

सत्यमूर्ति – *शिक्षा के विविध आयाम, महात्मा गांधी का शिक्षा दर्शन,* अरुण प्रकाशन दिल्ली (पेज नं 25,49)।